Volume-1, No.2 Aug.-2014, pp.109-111

अकबर की राजपूत–एक समीक्षा

श्री बृजेश चन्द्र श्रीवास्तव
एम.ए.,एम.एड्., नेट यू.जी.सी.।

मुगलों के राजपूत नीति ऐतिहासिक महत्ता से परिपूर्ण है। इस नीति से शासक वर्ग के स्तर पर हिन्दुओं तथा मुसलमानों के बीच संघर्ष की समाप्ति हुई तथा मित्रता एवं सहयोग का युग प्रारम्भ हुआ, जिससे सभी पक्षों को लाभ हुआ। राजपूत भारतीय राजनीति में 11वी शताब्दी से ही महत्वपूर्ण स्थान रखते थे परन्तु दिल्ली सल्तनत के सुल्तानों द्वारा इन्हे दबाना सम्भव नहीं हो सका यद्यपि इन्होनें (राजपूतों) ने दिल्ली पर पुनः अधिकार करने का असफल प्रयत्न भी किया।

राजपूतों के सम्बन्ध में एक विशिष्टीकरण का प्रारम्भ यूं तो सल्तनत काल से हो गया था परन्तु इसकी पराकाष्ठा सम्राट अकबर के युग में पायी जाती है। ये नीति भारत में मुगल शासन की एक सबसे स्थायी विशेषता थी, जो कट्टर उत्तराधिकारियों के युग में जारी न रह सकी। सल्तनत युग में सुल्तान सदा स्थानीय रायों को दबाने की कोशिश करते थे, वही ये राजपूत इन्हे घृणा की दृष्टि से देखते थे। इन रायों में ज्यादातर राजपूत थे। सल्तनत युग में सर्वप्रथम अलाउद्दीन खिलजी से स्वायत शासक रामदेव से सक्रिय सम्बन्ध स्थापित किया। अलाउद्दीन खिलजी ने देवगिरी के रामदेव की पुत्री झतियापल्ली से विवाह क

योकि उनकी प्रवृति (आदेशों के) उल्लंघन और अवज्ञा की नहीं बल्की आज्ञा पालन और सेवा की है''।

उदारवादी तथा धर्मसहिष्णु अकबर ने राजपूतों की महत्ता को समझते हुए निम्न कारणों से अपनी ओर मिलाने का प्रयास किया।

1. मुगलों को अफगानों द्वारा दी जा रही चुनौती का अन्त करना।
2. सीमा विस्तार करना।
3. बहुसंख्यक हिन्दू प्रजा के बीच स्वंय को लोकप्रिय बनाना।
4. हिन्दुस्तान का उत्तर–पश्चिम क्षेत्र, रजवाडा, दिल्ली, आगरा तथा पश्चिमी समुद्र तट के बन्दरगाहों के मध्य वाणिज्य के प्रमुख कड़ी थी, साथ ही रेगिस्तानी होने के कारण वर्ष भर व्यापारिक माल उपलब्ध कराता था।
5. हज यात्री प्रायः खम्भात तथा सूरत दो बन्दरगाहों से यात्रा पर जाते थे। ये दोनों बन्दरगाह उत्तरी भारत से रजवाडा के मध्यवर्ती भाग से सबद्ध थे।

किया बदले में रामदेव को स्वायत्त अधीनस्थ राज्य तथा नवसारी का जिला उपहार स्वरूप दिया। इस नीति को जारी रखते हुए अलाउद्दीन ने अपने पुत्र खिज्र खाँ का विवाह गुजरात के भूतपूर्व शासक की पुत्री देवलदेवी से कर दिया। लोदी शासकों ने भी इस नीति को जारी रखा।

मुगलों के भारत आगमन पर सबसे शक्तिशाली राजपूत शासक ही थें, जो उसके प्रतिद्धन्दी भी थे। 1527 में खानवा के युद्ध के पराजयोपरान्त राजपूत शक्ति को ग्रहण लग गया, जिससे कुछ समय के लिए राजपूत उत्तर भारत में हस्तक्षेप नहीं कर सके। इस समय में मुगल अफगान संघर्ष जारी रहा। मुगलों का राजपूतों के प्रति आकृष्ट होना कोई अकस्मात् घटना नही थी अपितु मुगल शक्ति सन्तुलन के लिए यह आवश्यक भी था। फखरूद्दीन भक्करी 17वीं शती के मध्य में लिखता है कि शाह तहमास्प ने हूँमायू को यह सलाह दी थी कि ''राजपूतों की परवरिश करो'' क्योकि ''जमीदारों पर नियंत्रण किए बिना हिन्द पर हुकूमत करना मुमकिन नहीं है''। लेखक आगे लिखता है कि हूँमायू ने भी ने भी अकबर को सलाह दी थी कि'' इस कौम (राजपूत) की परवरिश करनी चाहिए

6. दक्कन तथा पश्चिमी ऐशिया में विस्तार का कुशल तथा सुगम मार्ग भी राजपूताना से होकर ही जाता था।

उपरोक्त के साथ ही अकबर बहुसंख्यक प्रजा का स्वामी बनना चाहता था। बहुसंख्यक हिन्दुओं की सहानुभूति तथा समर्थन द्वारा मुगल सम्राज्य चिरस्थायी रह सकता था, जिसमें राजपूत नरेशों की भूमिका अग्णी हो सकती थी।

उपरोक्त परिस्थितियों के मुद्देनजर अकबर ने राजपूतों की ओर मित्रता का हाथ बढाया। अकबर की राजपूत नीति को तीन चरणों में विभक्त किया जा सकता है। पहला चरण प्रांरम्भ से लेकर 1569–70 तक माना जाता है। जिसमें उसने दिल्ली के सुल्तानों की नीति का अनुगमन किया। दूसरे चरण में अकबर ने राजपूतों के साथ दोस्ती बढाने का प्रयत्न किया। इस चरण में पुरानी नीति के कुछ तत्व भी जारी रहे। तीसरे चरण में अकबर ने कट्टरपन्थी से अपने को पृथक कर लिया तथा स्वतंत्र रूप से स्वच्छ हृदय से राजपूतों को अपनी ओर मिलने का अश्लघनीय प्रयास किया।

प्रथम चरण को लेकर विद्वनो में मतभेद है। कुछ लोगों का तर्क है कि अकबर ने ऐसी व्यवस्था शुरू की जिसमें धर्म के आधार पर सार्वजनिक नियुक्तियों में कोई भेदभाव न रहे। दूसरे यह तर्क देते है कि अकबर की नीति राजपूतों पर छल–शान्ति का सम्मिश्रण था। जिसके तहत उसने राजपूतों को आपस में लड़ाया ताकि वे संगठित होकर मुगल सम्राज्य को चुनौती न दे सके। साथ ही अकबर ने फूट डालो और राज करों की नीति, अपने ओर मिलाने की नीति का एक अंग भी थी। जिसमें राजपूत तथा अफगान दोनों शामिल थे। अधिकांश जमीदार हिन्दू थे। उसमें भी राजपूतों की जगत प्रसिद्ध स्वामीभक्ति ने अकबर को अपनी ओर खींचा। एक घटना को लेकर भी राजपूतों के सम्बन्ध में अकबर के मन पर बहुत गहरी छाप डाली। बात 1557 की है जब सम्राट का हाथी उन्मत हो उठा। सभी वहां से भाग खडे हुए परन्तु आमेर का राजा भारपल अपनी छोटी सी राजपूत टुकड़ी के साथ वहीं डटा रहा।

राजपूत नीति के प्रथम चरण की मुख्य विशेषताओं में इतिहास प्रसिद्ध तथाकथित अकबर–जोधा बेगम विवाह था। तथाकथित जोधाबेगम के पिता राणा भारमल एक छोटी की रियासत के शासक थे। इसका अपने भाई के साथ विवाद चल रहा था इस समय मेंवात का मुगल हाकिम शर्फुद्दीन था जो रिश्ते में अकबर का बहनोई था। भारमल ने न केवल शफुद्दीन को पेशकश देना स्वीकार किया अपितु बंधकों के तौर पर अपना बेटा और दो भतीजे भी दिए। जब सम्राट अकबर ख्वाजा मइनुद्दीन चिश्ती की दरगाह से लौट रहा था तो सांगानेर (सांभर) नामक स्थान पर, राजा भारमल उसके दरबार में उपस्थित हुआ तथा अपनी एक बेटी का विवाह भी करने को तैयार हो गया तो अकबर ने शर्फुद्दीन को राजा के मामले में दखलंदाजी न करने की हिदायत दी। भारमल की पुत्री का नाम हरखाबाई या वली नीमत बेगम था। राजा भारमल ने यद्यपि इससे पूर्व भी अपनी सबसे बड़ी बेटी का विवाह भी मुस्लिमों के साथ किया था। जब हाजी खां ने आम्बेर पर आक्रमण किया था तब भारमल ने अपनी बडी बेटी का विवाह उससे कर दिया था।

अकबर का भारमल की बेटी से विवाह कोई थोपा गया सम्बन्ध न था अपितु इसकी अपेक्षा यह संम्बन्ध परिस्थितियों के तकाजे और राजाओं के इस अहसास के परिणम थे कि ऐसे संम्बन्धों में उन्हे कितने लाभ हो सकते है। इस वैवाहिक संबन्ध के बारे में बेनी प्रसाद कहते है'' अकबर का भारमल के साथ वैवाहिक संम्बन्ध एक नवीन युग का प्रारम्भ करता है क्योकि इससे देश को अत्यधिक योग्य व्यक्तियों का सहयोग सम्राटों को प्राप्त हुआ और मुगलों की चार पीढियों को महानतम् योद्धाओं एवं राजनीतिज्ञों की सेवा प्राप्त हुई''।

(2) इसी प्रथम चरण में अकबर ने चित्तौड़ के शासक उदयसिंह को 1567 में पराजित कर दिया था। इसी युद्ध में जयमल तथा फत्ता भी मारा गया। 1569 में चित्तौड़ विजय के एक वर्ष बाद अकबर ने रणथम्बौर के सुरजन हाड़ा पर आक्रमण किया जो आसफ खां के नेतृत्व में था। जोतपुर के राजा मालदेव जो पहले रामदेव का मित्र था, बिजित करके बीकानेर के राय रामसिंह को दे दिया।

इस चरण में अकबर राजपूतों के प्रति उदार हुआ। उसका झुकाव धीरे–धीरे राजपूतों के प्रति होने लगा परन्तु ये परिस्थितिजन्य थे। उसने कालिंजर के राजा रामचन्द्र को समर्पण की एवज में इलाहाबाद का सुबेदार बना दिया। रणथम्बौर के हाकिम राव दलपतराय को भी शाही सेवा में स्वीकार कर लिया। कच्छवाहा नरेश भारमल उसका विश्वस्त व्यक्ति बन गया जिसक प्रमाण गुजरात अभियान के समय 1572 में उसे आगरा की सारी जिम्मेंदारी सौप दिया गया, से मिलता है। किसी हिन्दू नरेश को यह सम्मान पहली बार मिला था। यद्यपि इस चरण में सम्राट की धार्मिक विस्तार, सार्वजनिक नीतियां और राजपूत नीति पृथक–पृथक विकसित हुई थी परन्तु बाद में एक में समाहित हो गयी।

1570 से तक आते–आते मुगल राजपूत संम्बन्ध और प्रगाढ हुये। जैसलमेंर के राव लहरराय तथा कल्याणमल की बेटियों का विवाह भी अकबर के साथ हुआ। इस दूसरे चरण का प्रारम्भ कुछ इतिहासकार गुजरात अभियान के साथ मानते है। आरम्भ में मानसिंह को एक शक्तिशाली सेना के साथ शेर खां फुलादी और उसके बेटों को पकड़ने के लिए भेजा। मानसिंह शेर खां तथा उसके बेटों को पकड़ नही पाये परन्तु उसके समस्त माल असबाब पर नियंत्रण अवश्य कर लिया। इस कार्य हेतु मानसिंह को व्यक्तिगत प्रशंसा प्राप्त हुई तथा उसे मुगल दरबार का प्रमुख ओहदेदार बना दिया गया। व्यक्तिगत संम्बन्धों का एक अन्य उदाहरण सरनाल आक्रमण के समय मिलता है जब भगवंत सिंह तथा मानसिंह इब्राहीम हुसैन मिर्जा के खिलाफ सम्राट अकबर युद्धरत था। इस आक्रमण में मानसिंह ने सेना की अग्रिंम पंक्ति का मोर्चा सँभाला वहीं भगवन्त सिंह सम्राट अकबर की व्यतिगत सुरक्षा में रहा। इस युद्ध में भगवन्त सिंह का एक बेटा भी मारा गया जिसे अकबर ने व्यक्तिगत क्षति माना। इस कार्य में उल्लेखनीय कृत यह था सम्राट ने भगवन्त दास की बहन को, जो सलीम की मॉ थी, शोक मनाने के लिये आम्बेर भेजा। बाद में उसने भूपत के हत्यारे मोहम्मद हुसैन मिर्जा के बन्दी बनाए गये सौतेले भाई शाह मद्द को भाला भोप कर मार डाला।

अकबर की कृपादृष्टि केवल कछवाहों पर ही नही थी अपितु अन्य राजपूत राजा भी इससे लाभान्वित हुए।

गुजरात के अभियान पर निकलने से पूर्व अकबर ने बीकानेर के राय रायसिंह को सिरोही तथा जोधपुर की जिम्मेंदारी सौप दी थी ताकि राणा की ओर से कोई अतिक्रमण न होने पाये और गुजरात को जाने वाला मार्ग खुला रहे। इस द्वितीय चरण में मेंवाड राज्य ने अकबर की सम्प्रभुता को चुनौती दी। मेंवाड अपनी सघन जंगल, विस्तृत फैलाओं तथा पहाडी भूप्रदेशों के कारण अपनी स्वतंत्रता का दीप जलाये रखा। मेंवाड़ के राजा को भी राजपूताना में अपनी प्रथम स्थिति का भान था। जगत प्रसिद्ध हल्दी घाटी का युद्ध राणा प्रताप तथा कुंवर मान सिंह, आसफ खां तथा काजी खां के बीच लड़ा गया। शाही सेना के कुशलतम क्षमता तथा योग्यता के कारण प्रताप को कुंभलगढ की पहाड़ियों में आश्रय लेना पड़ा परन्तु वे सम्पूर्ण मेंवाड़ को बिजित न कर सके।

इस दौर में सम्राज्य के वफादार में मित्र के रूप में उभरने लगे थे साथ ही मुगलों के बाजू के तलवार के रूप में विकसित होने लगे। यह सच्चाई तब और मुखर रूप से सामने प्रकट हुई जब मेंवाड़ के विरूद्ध मानसिंह को सेनापति बनाने से प्रकट होता है। ये घटना' एक हिन्दू का इस्लाम की खातिर तलवार उठाने का था।

(3) राजपूत नीति के तृतीय चरण में अकबर अपने कट्टरपंथी विचारों से पूर्णरूपेण मुक्त हो चुका था। 1579 में इमाम– ए– आदिल, मजहर की घोषणा आदि कारण थे। 1583–84 में अकबर ने प्रशासनिक कार्यो के लिए कुलीन हिन्दुओं तथा निष्ठावान मुसलमानों चुनाव किया। कुलीन हिन्दुओं में कछवाहा परिवार प्रमुख था। आइन–ए– अकबरी में मनसबदारों की श्रेणी में सम्मिलित 24 राजपूत सरदारों ने 13 कछवाहा राजपूत थे। गैर कछवाहों में बीकानेर तथा नरवान के राजा प्रमुख थे।

प्रारम्भ में अकबर ने अपनी राजनैतिक महत्वाकांक्षा की पूर्ति हेतु राजपूत नीति को प्रारम्भ किया था। परन्तु शनैः शनैः हिन्दू मुस्लिम समीपता तथा उसके परिवार के सदस्यों जिन्हें मिर्जा कहा जाता था, का कई बार घातक विद्धोह आदि में राजपूत नीति की आरम्भिक स्वरूप परिवर्तन कर दिया। एस0 आर0 शर्मा के अनुसार'' अकबर ने एक ऐसी नीति का अनुसरण किया जिसके द्वारा वह हिन्दुस्तान को राजनैतिक तथा सांस्कृतिक एकता में बांध सका।''

संदर्भ ग्रन्थ

1. मध्यकालीन भारत–सतीश चन्द्र
2. अकबर दी ग्रेट मुगल– स्मिथ
3. तुजुके जहांगीरी का अंग्रेजी अनुवाद– जिल्द 1
4. मध्यकालीन भारत का संक्षिप्त इतिहास– ईश्वरी प्रसाद
5. अकबरनामा तथा आइने अकबरी
6. राजर्स और बेवरिज खण्ड 1
7. भारत का इतिहास खण्ड 2–गौरी शंकर ओझा
8. हुँमायु बादशाह– सुकुमार बनर्जी
9. हुँमायुनामा– गुलबदन बेगम
10. इकबालनामा– इलिएट।